International Journal of Applied Research 2015; 1(8): 19-20

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(8): 19-20
www.allresearchjournal.com
Received: 15-05-2015
Accepted: 20-06-2015

सुशीलकुमार
शोध छात्र संस्कृत विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence:
सुशीलकुमार
शोध छात्र संस्कृत विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संस्कृत उपन्यास में साम्प्रदायिक सद्भाव के स्वर (आहतकश्मीरम् के परिप्रेक्ष्य में)

सुशीलकुमार

भारत प्राचीन काल से ही सर्वधर्मसमभाव वाला देश रहा है। यहाँ पर प्रारम्भ काल से ही सभी मतावलम्बियों के विचारों को सम्मान दिया गया है। सभी सम्प्रदाय अपने मत के अनुसार धार्मिक कर्मकाण्ड तथा अपने मत अथवा धर्म का प्रचार करने को स्वतन्त्र रहे हैं। भारत में विचारों को विचारों से पराजित कर अपने धर्म की स्थापना करने की परम्परा प्रारम्भ से ही स्वीकार्य रही है।

संस्कृत भाषा को यह श्रेय रहा है कि सभी सम्प्रदायों ने इस भाषा को सर्वदा विशेष महत्त्व दिया है और आज संस्कृत उसी कारण से ही सभी मतावलम्बियों के द्वारा सम्माननीय है।

संस्कृत में काव्य की अनेक विधाओं ने जन्म लिया और आज भी नवसर्जनाओं के कारण चिरनवीन बनी हुई है। आज की सभी भाषाओं में सर्वप्रमुख विधा उपन्यास का अपना स्थान है। उपन्यास जीवन का प्रतिरूप है, जीवन के समानान्तर चलने का प्रयत्न करता है। वह शिल्प के अनुशासन को कम स्वीकार करने वाला, विकासशील काव्यरूप है, अतः वह स्वाभाविक ही है।[1]

आज की परिस्थितियाँ, परिवेश और विचारधाराएँ उपन्यास के कथ्य, रूप और आध्यात्मिक गुण सभी को प्रभावित करती हैं। आज का उपन्यास एक ओर उस धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक अस्थिरता को प्रत्यङ्कित करता है जिसमें हमें रहना पड रहा है और दूसरी ओर वह उस नये समाज की तस्वीर प्रस्तुत करता है जिसमें पुराने अन्तर्विरोध नाम मात्र को रह गये हैं। वह मानव अनुभव को समझने और संप्रेषित करने का सर्वाधिक सशक्त साहित्यिक माध्यम है। अन्य कलाएँ– संगीत, मूर्तिकला, वास्तुकला आदि जीवन के यथार्थ से मुँह मोड सकती हैं, पर उपन्यास ऐसा नहीं कर सकता। ज्यों ही वह जीवन के प्रति उदासीन होगा, त्यों ही उसकी कला टूटकर बिखर जायेगी। उपन्यास–तन्त्र उसे बाध्य करता है कि वह जीवन की कठोरताओं और कटुताओं का साहसपूर्ण सामना करे। वह जीवन संघर्ष में परस्पर विरोधी विचारों, संकल्प–शक्तियों और आदर्शों के द्वन्द्व को चित्रित करता है और यदि सम्भव हो तो समाधान देने का प्रयास करता है।[2]

आहतकश्मीरम् भी इसी श्रेणी का उपन्यास है जो समाज के चित्र को यथावत् प्रस्तुत करने का प्रयास ही नहीं करता अपितु समाज के समक्ष एक आदर्श स्वरूप की स्थापना भी करता है।

आज समाज में हिन्दू मुस्लिम सद्भाव को समाप्त करने के अनेक अवसर दिखलाई पडते है। उस परम्परा को तोडते हुए तथा समाज में धार्मिक सहिष्णुता बनाने के लिये आहतकश्मीरम् एक नई मिशाल पेश करता है जिसमें एक मुस्लिम परिवार एक हिन्दू परिवार की दंगे के समय रक्षा करता है और एक हिन्दू परिवार मुस्लिम परिवार की। दंगे के पश्चात् मुस्लिम परिवार एक हिन्दू बालिका की रक्षा करता है तथा उसे ससम्मान अपने हिन्दू धर्म का पालन करने की अनुमति देते हुए व्यवस्था करता है।–

> *तदैव स्वजनानां परिचयं दातुं रहमानोऽवोचत्– श्रीमान्, एष मदीयो ज्यायान् भ्राता मुजीवउररहमानः, एषा ब्राह्मणी मे माता मनीषा, इयं मदीया भगिनी प्रभा।*[3]

धार्मिक दंगों मे शमशुल रहमान के परिवार को इसलिये जला दिया गया क्योंकि धर्मान्धियों को ये पता चल गया था कि शमशुल के परिवार ने हिन्दू लोगों को रक्षार्थ अपने घर में स्थान दे रखा है। एक और जहाँ इस्लाम धर्मान्ध लोगों की क्रूरता यहाँ दृष्टिगोचर होती है ।–

सत्यमेव मदीय गृहं भस्मीभूतम्। तत्क्षेत्रात् पलायमानैरनेकैः परिचितैः प्रियजनैः सूचितम्। मम गृहे हिन्दुजनानां सुरक्षाप्रदानसूचनयाऽति क्रुद्धैस्तैः तत्रात्याचारसरणिरेव प्रस्तुता।[4]

अन्यत्र इस्लाम धर्म के लोगों के उच्च चरित्र का भी अवलोकन होता है।–
जब शमशुल रहमान नगर के बाहर अपने जीवन की रक्षा के लिये छिपता फिर रहा था तभी उसे नदी के किनारे अचेता अवस्था में एक युवती दिखलायी पडती है जिसकी वह सद्प्रयत्न से जीवन रक्षा करता है और अत्यन्त भाव–विह्वल होकर सोचता है कि –

"अत्याचारेण पीडिता अबला नार्यः किं कुर्वन्तु, निश्चितं तासां कृते कृष्णगङ्गाक्रोडमेव शरणम्" इति विचारयतो मदीया दृष्टिः किञ्चित् दूरे सुप्ताया तदबलाया उपरि पतिता। कीदृशमासीदस्या जीवनम्, परं दुर्जनै कीदृशम् कृतम्।[5]

शमशुल रहमान कहता है कि वह धर्म कैसा जो मानवों में परस्पर भेद करें और यदि कोई धर्म मानवों में भेद करें तो वह धर्म कैसे हो सकता है –

कीदृगसौ धर्मो यो मनुष्ये भेदं जनयति, परस्परं घृणां द्वेषमुत्पादयति धर्मनाम्नाऽन्यं हन्ति। परमात्मना तु मनुष्याः निर्मिताः तेषु भेदकारको धर्मः, किं सत्यं धर्मः एव को वदेत्।[6]

शमशुलरहमान का पुत्र अब्दुलरहमान भी पिता के नक्शेकदम पर चलते हुए सेना में भर्ती होता है और कारगिल युद्ध में घायल मेजर रविकान्त को रक्त प्रदान कर जीवन रक्षा करता है। यह सेना में सभी धर्म के लोगों का भ्रातृभाव से काम करने का अप्रतिम उदाहरण है।

रहमानस्य नामधेयं श्रुत्वा पुत्रस्य जीवनरक्षार्थं रक्तदातारं प्रभाकरो भावविह्वलो भूत्वा हृदयेन तमालिंग्य गद्गदकण्ठोऽवोचत्–पुत्र! त्वदीयरक्तेनैष रविः प्राणान् धरति।[7]

भारत में आतंकवाद की समस्या पाकिस्तान के द्वारा प्रचारित और कश्मीर को हत्याकाण्ड की भूमि बनाने के लिये कैप्टन रहमान आक्रोश प्रकट करता है–

"तदुपरि समस्तभारतं पाकप्रचारितेनातंकवादेन त्रस्तं प्रतीयते। विशेषरूपेण कश्मीरं तु निरीहजनानां हत्याकाण्डस्थलमेव भूतम्। कैप्टनरहमानेन आत्मनः आक्रोशोऽपि प्रकटिकृतः।"[8]

कैप्टन रहमान कहता है कि आज भी भारत में पाकिस्तान आदि देशों से ज्यादा इस्लाम मतावलम्बी रहते हैं और वे सभी अपने धर्म का आचरण स्वतन्त्रतया करते हैं और यह भारत की विशेषता है–

अद्यापि भारते पाकिस्तानादधिकसंख्याकाः मोहमदीया भारते निवसन्ति परं पाकशासका कश्मीरं धर्मनाम्ना बलात् कस्यापि शिरस्यारोपणस्य विषयो नास्ति। धर्मस्तु अन्तरात्मनः आस्था विद्यते। यस्य यस्मिन् धर्मे, आस्था स्यात् तं धर्ममनुसर्तुं स्वतन्त्रता भारते विद्यते।[9]

सभी धर्मों के विचार शान्ति और सहिष्णुता का सन्देश देते हैं। प्रत्येक सम्प्रदाय या धर्म को बनाने वाला परमपिता परमेश्वर एक ही है। तो फिर धर्म के नाम पर विद्वेष कैसा? प्रत्येक मतावलम्बी अथवा धर्मावलम्बी समग्र स्वतन्त्रता से अपने धर्म मत का पालन केवल भारत में ही कर सकता है। यथा अब्दुलरहमान ने कहा भी है कि –

पश्य तात, मदीया माता हिन्दु–धर्ममवलम्बते, भगिनी तमनुसरति। अहं मोहमदीय–धर्ममनुसरामि, पितापि तमेवावलम्बते। वस्तुतः सर्वे धर्मास्तस्यैव सर्वशक्तिमतः परमात्मन एव मार्गं दर्शयन्ति। अतः धर्म नाम्ना कीदृशो विद्वेषः, कीदृशः संघर्षः। अतः सर्वै मिलित्वाऽस्य राष्ट्रस्य रक्षा करणीया। धर्मनाम्ना परस्परविद्वेषो विस्मरणीयः। धन्यवादेन सह रहमानो भाषणं समापयत्।[10]

आज जहाँ विश्व में इस्लाम के धर्मान्ध लोग ईराक, सीरीया, पाकिस्तान आदि देशों में नरसंहार कर रहे हैं। वहाँ पर ये रहमान के विचार उन्हें प्रेरणा देने वाले हो सकते हैं। भारत में समाज जैसे–जैसे शिक्षित हो रहा है वैसे–वैसे धार्मिक कट्टरता भी समाप्त होती जा रही है। धार्मिक कट्टरता जो मानव–मानव में विभेद करें वो केवल विनाश दे सकती है शान्ति नहीं।
अन्त में यही निष्कर्ष निकलता है कि आज समाज के कुछ लोगों का जो कथन रहता है कि संस्कृत केवल एक सम्प्रदाय विशेष की भाषा है उसमें अन्य सम्प्रदाय के प्रति स्थान नहीं है यह विचार इस उपन्यास के द्वारा समाप्तप्रायः हो जाता है। इस उपन्यास के ये विचार केवल विचार नहीं है अपितु बदलते समाज का एक प्रतिबिम्ब है क्योंकि उपन्यास बदलते समय की एक झाँकी प्रस्तुत करता है।

संदर्भ

1. *उपन्यास : स्वरूप, संरचना तथा शिल्प, डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्त, लोधी ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली, १९८०, पृष्ठ–९*
2. *तत्रैव, पृष्ठ–९*
3. *आहतकश्मीरम्, डॉ. बलभद्रप्रसादशास्त्री, बरेली, २००८, पृष्ठ–३९*
4. *तत्रैव, पृष्ठ–३०*
5. *तत्रैव, पृष्ठ–३३*
6. *तत्रैव, पृष्ठ–३३*
7. *तत्रैव, पृष्ठ– ३९*
8. *तत्रैव, पृष्ठ–६१*
9. *तत्रैव, पृष्ठ–७५*
10. *तत्रैव, पृष्ठ–७५*